वेदान्त आश्रम की मासिक ई - पत्रिका

# वेदान्त पीयूष

वर्ष २२ अगस्त - २०२२ प्रकाशन - ०८

सम्पादिका :

स्वामिनी अमितानन्द सरस्वती

# वेदान्त पीयूष

## अगस्त २०२२

प्रकाशक

वेदान्त आश्रम,

ई - २९४८, सुदामा नगर

इन्दौर - ४५२००९

Web : https://www.vmission.org.in

email : vmission@gmail.com

ॐ
सदाशिवसमारम्भाम्
शंकराचार्य मध्यमाम्
अस्मदाचार्य पर्यन्ताम्
वन्दे गुरु परम्पराम्

# वेदान्त पीयूष

## विषय सूचि

| | | |
|---|---|---|
| 1, | श्लोक | 07 |
| 2. | पू. गुरुजी का संदेश | 08 |
| 3. | वेदान्त लेख | 14 |
| 4. | लघु वाक्यवृत्ति | 20 |
| 5. | गीता चिन्तन | 26 |
| 6. | श्री लक्ष्मण चरित्र | 34 |
| 7. | जीवन्मुक्त | 40 |
| 8. | कथा | 46 |
| 9. | मिशन-आश्रम समाचार | 54 |
| 10. | आगामी कार्यक्रम | 79 |
| 11. | इण्टरनेट समाचार | 80 |
| 12 | लिन्क | 82 |


अगस्त 2022

पंचप्राणमनोबुद्धि
दशेन्द्रियसमन्वितम्।
अपंचीकृतभूतोत्थं
सूक्ष्मांगं भोगसाधनम्।।

( आत्मबोध श्लोक : 13 )

पंच प्राण, पांच ज्ञानेन्द्रियां, पांच कर्मेन्द्रियां, मन और बुद्धि इस प्रकार सत्रह वस्तुओं के समूहरूप अपंचीकृत महाभूतों से निर्मित हुआ यह सूक्ष्म शरीर सुख दुःख के अनुभवों का साधन है।

# पूज्य गुरुजी का सन्देश

# जीवनमुक्त

संसार के बन्धन से मुक्ति के लिए वेदान्त शास्त्र ही प्रमाण है। वेदान्ततात्पर्य को जानकर, उसे हृदयान्वित करने से समस्त आवागमन से मुक्त हो जाते है। अज्ञान में विद्यमान जीव सत्य को नहीं जानने के कारण उपाधि में अभिव्यक्त चेतना को अपना सत्य मानकर उससे अस्मिता बनाकर स्वयं को संकुचित, अपूर्ण समझ लेता है। उसके उपरान्त अपूर्ण व्यक्ति पूर्ण होने के लिए बाह्य विषयों का आश्रय लेता है; उससे क्षणिक तृप्ति तो होती है, किन्तु छोटेपन की मूलभूत अस्मिता में परिवर्तन नहीं होता है। इस प्रकार सतत संसार की यात्रा चलती रहती है। जिसमें इसका रियलाइजेशन होता है, उसमें जिज्ञासा जन्म लेती है।

# जीवन्मुक्त

उसमें यह प्रश्न आता है कि हममें अपूर्णता कैसे आती है? क्या हम सही में अपूर्ण, प्यासे छोटे है? जिज्ञासा की तीव्रता उसे आत्मज्ञान के लिए प्रेरित करती है और वह वेदान्त का साधक बनता है। उसके लिए श्रोत्रिय-ब्रह्मनिष्ठ गुरु के श्रीचरणों में बैठ्कर वेदान्त का श्रवण, मननादि करके वेदान्त विज्ञान से युक्त होकर मुक्त हो जाता है। यह विज्ञान संसारी से विलक्षण है। संसारी को कर्म से, क्षणिक रूप से क्षूद्र अस्मिता शमन की अनुभूति अर्थात् विज्ञान होता है। हम भोक्ता बने रहकर भोग से तृप्त होते है।

जब कि वेदान्त बताता है कि हम वस्तुतः कर्ता-भोक्ता जीव है ही नहीं। उपाधि धारण करके, उससे तादात्म्य करने से उपाधि के धर्मो को अपने मानकर हम दृष्टा, कर्तादि होते है। यदि वास्तव में कर्तादिरूप क्षूद्र जीव होते तो मुक्ति की असम्भावना होती। जब अज्ञानवश हम

# जीवन्मुक्त

अस्मिताशून्य होते है, तो इस अवस्था में रह नहीं पाते है। अपनी प्रामाणिक अस्मिता नहीं जानने की वजह से, किसी न किसी को पकडकर, उससे तादात्म्य करके क्षूद्र अस्मिता को धारण कर लेते है। हमारी वास्तविक उपाधि अपने द्वारा की गई धारणा व मोह है।

जिस प्रकार प्रकाश और अन्धकार का संयोग सम्भव नहीं है, वैसे ही वस्तुतः हम चिन्मयी सत्ता का उपाधि से संयोग असम्भव है। अतः आत्म-अनात्म संयोग कल्पनामात्र से ही होता है। न जड़ में पकडने का सामर्थ्य है और न चेतन को पकडने की आवश्यकता है। अस्मिता में कमी के एहसास से हम प्यासे भोक्ता बन गए, और समर्थ होने से कर्तृत्वादि से युक्त हुए, इस प्रकार एक कर्ता-भोक्ता जीव बन गया। हममें कर्तादिपन नैमित्तिक है, स्वाभाविक नहीं। कर्ता, कर्मक्षेत्र, उसके संसाधन आदि सब हमारी वजह से, हमसे अनुगृहीत है। कर्ता अन्तःकरण

# जीवन्मुक्त

चतुष्टय का एक अंश है – जो कि अभिव्यक्त हुआ है। इस अभिव्यक्ति के पूर्व भी हम थे। जब इस तथ्य को वेदान्त प्रमाण से जानते है कि यह एक परिवेशमात्र है। यह रोल तादात्म्य की वजह से बनता है। अतः हम उसे धारण करने व छोड़ने में समर्थ, स्वतंत्र है। तब ही कल्पनाजनित तादात्म्य से छूटकारा होता है। इस प्रकार वेदान्त हमारी सच्चिदानन्द स्वरूपता को रिविल करता है। इसका विज्ञान हो जाने पर काल्पनिक, छोटेपन की अस्मिता का पूर्णतः शमन हो जाता है। उसके उपरान्त हम मुक्त होते नहीं है, किन्तु यह देख लेते है कि हम नित्य शुद्ध बुद्ध मुक्त है।

इसकी अपरोक्षानुभूति अन्य सब अस्मिता को जड़ से दूर कर देती है। इस निश्चय से हमें प्रामाणिक अस्मिता मिल गई। यहां हमें कुछ करना नहीं, जाननामात्र है, क्योंकि वेदान्त प्रेरक नहीं, किन्तु प्रतिपादक शास्त्र

# जीवन्मुक्त

है। इस प्रकार जिसने स्वयं को ब्रह्म अखण्ड चेतना देख लिया, उसका आवागमन समाप्त हो गया। शरीर के प्रारब्ध पर्यन्त अभिव्यक्त चेतना तो रहती है, जिसमें पंचप्राण, मन, बुद्धि तथा उसमें अभिव्यक्त जीव भी विद्यमान है। अपनी वास्तविकता के ज्ञान से वे जीवन्मुक्त होकर जीते है।

वेदान्त लेख
अहम् ब्रह्मास्मि

# मृत्यु का स्मरण

मृत्यु जीवन का यथार्थ है, उस पर विचार मुक्तिदायक, कल्याणकारी है। उससे अनेकों शिक्षा ग्रहण होती है, साथ ही अध्यात्मपथ प्रशस्त होता है। जीव आज सत्य, महत्वपूर्ण है। उसमें छोटापन, नश्वरता सम्भावित मृत्यु स्वाभाविकरूप से है। मृत्यु का शब्दार्थ देखें तो यह एक ऐसी अनुभूति है, जिसमें बाह्य विषयादि, तद्विषयक वासना व कामना, अपनी अस्मिता, सम्बन्धादि समस्त अनुभूत दुनिया पूर्णतः अनुपलब्ध हो जाती है। अन्य के लिए वह व्यक्ति स्मृतिमात्र का विषय रहता है। मृत्यु का यथार्थ विचार वर्तमान जीवन में भी आमूल परिवर्तन लाता है। सभी का एक समय यहां अन्त होना ही है। अतः जो भी उपलब्ध उसके साथ अनासक्तिपूर्ण स्वस्थ सम्बन्ध होने लगते है। सुख-सुरक्षादि के लिए अन्य पर निर्भर नहीं रहेंगे। अन्य की मृत्यु से भी यह देखते है

# मृत्यु का स्मरण

कि उसके नहीं होने से भी दुनिया की व्यवस्था, संचालनादि यथावत् चलता है।

इससे यह दिखता है कि हम या कोई सीमित जीव सब नहीं कर रहा है; किन्तु एक अकल्पनीय संचालक ईश्वर है, वे ही सब संचालित कर रहे हैं। उनसे ही सब व्यवस्थादि, सुन्दर जगत तथा

मृत्यु के स्मरण से समस्त प्रकार के अभिमान, आसक्ति व विकारादि से मुक्त होते हैं।

जीवन-मृत्यु आदि प्राप्त हो रहे हैं। इसे देखते हुए ईश्वर के प्रति विश्वास की दृढ़ता होने लगती है, और आसक्ति, चिन्तादि से मुक्त होते जाते है। जो प्राप्त हो रहा है, उसमें धन्यता और आशीर्वाद देखने लगते हैं। असंग होकर प्रेम व धन्यता से जीने की प्रेरणा से युक्त हमें जीवन्त बनाए रखता है। इस व्यवस्था को देखकर अपना कर्तृत्व का अभिमान शिथिल होने लगता है। मृत्यु के समय हम भी अस्मिताशून्य होनेवाले है, तो किसी अभिमान वा कामना की गुंजाईश नहीं है। सभी चेष्टाएं इस क्षूद्र अस्मितायुक्त अभिव्यक्ति की अल्पता की समाप्ति के लिए भोक्तृत्व से प्रेरित होती है, किन्तु इस तथ्य को देखने पर नश्वर

# मृत्यु का स्मरण

जीव के लिए नश्वर दुनिया से अपेक्षा करना मोह दिखने लगता है।

मृत्यु में यह सब छूटनेवाला है; यह जानते हुए उसे पहले छोडें। उससे आसक्ति, राग-द्वेषादि का त्याग करें। यह सब समाप्त ही होना है तो उस क्षणिक, काल्पनिक अस्मिता के लिए इन विषयों से क्यों आसक्त हो! उस क्षूद्र, असुरक्षित, भयभीत अस्मिता को जीवन का आधार नहीं बनाते हुए एक नए सम्बन्ध की खोज होती है, जहां न छोडते है, और न पकडते है। मृत्यु से शिक्षा लेनेमात्र से जीव कर्तृत्व-भोक्तृत्व रूप अस्मिता

'मृत्यु का स्मरण अत्यन्त कल्याणकर है।'

से तादात्म्यरहित, मुक्त होता जाता है। इस प्रकार काल्पनिक अस्मिता से मुक्त होने लगती है।

यद्यपि मृत्यु के साथ हमारा अस्तित्व पूर्णतः समाप्त नही हो जाता है, इसकी शास्त्रादि प्रमाण से पुष्टि होती है कि कर्मानुसार लोकान्तर व देहान्तर की प्राप्ति होती है। उसका प्रयोजन कर्म को सुन्दरता, प्रेम व स्वकेन्द्रिता से मुक्त होकर धर्माचरण करना है। हमारे जिस अस्तित्व की समाप्ति वा मृत्यु नहीं होती है-वह अस्तित्व अत्यन्त विलक्षण है। आज की अस्मिता अस्थायी और काल्पनिक है। अपनी

# मृत्यु का स्मरण

काल्पनिक अस्मिता से तादात्म्य की समाप्ति होना ही वास्तविक मृत्यु है।

इस मृत्यु के उपरान्त भिन्न अध्याय आरम्भ होता है कि, जहां ऐसे मैं की पहचान व जाग्रति है कि जिससे समस्त संकुचिता, तज्जनित विकारादि से मुक्ति हो जाती है। तब अपने ऐसे यथार्थ को देखने में समर्थ होते है – जो स्वप्रकाश, स्वत:सिद्ध है। यही वास्तविक ज्ञान है। अभिव्यक्त चेतना के तादात्म्य से मुक्त होना रूप मृत्यु होने पर ही हम मृत्यु से परे अपने सत्यस्वरूपता में जगते हैं। यही संसरण से मुक्ति का हेतु है। इस प्रकार मृत्यु का विचार अत्यन्त कल्याणकर व मुक्तिदायक है।

# विभूति दर्शन

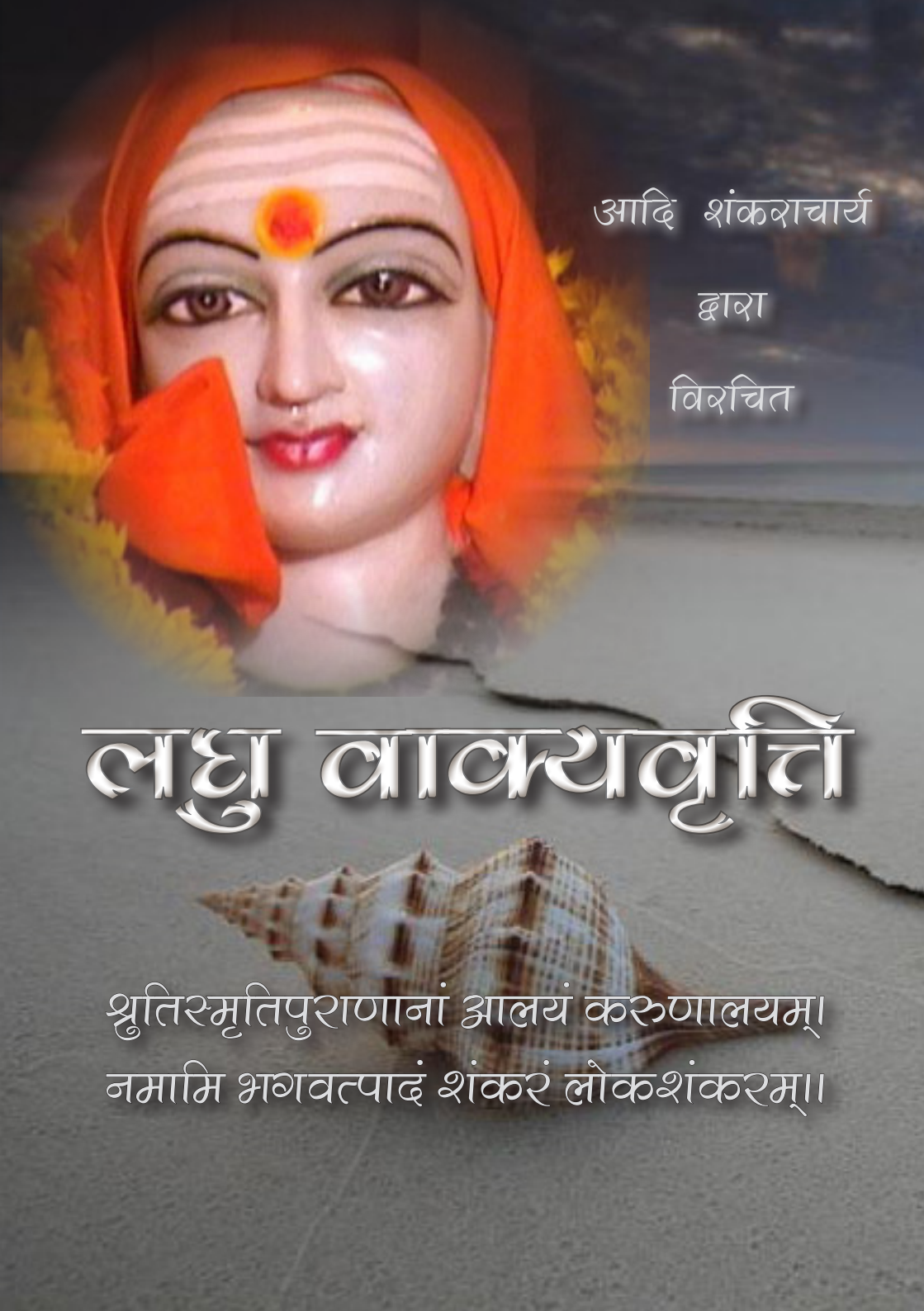

आदि शंकराचार्य

द्वारा

विरचित

# लघु वाक्यवृत्ति

श्रुतिस्मृतिपुराणानां आलयं करुणालयम्।
नमामि भगवत्पादं शंकरं लोकशंकरम्।।

# श्लोक : ८

रूपाच्च गुणदोषाभ्यां
विविक्ता केवला चितिः।
सैवानुवर्तते रूप-
रसादीनां विकल्पने।।

रूपादि विषय एवं जीव द्वारा उन पर कल्पित गुण-दोष रूपी अध्यारोप को अधिष्ठान रूपी चेतनता से विवेक द्वारा पृथक् कर देखो। यह चेतनता सब रूपादि को आत्मवान करने के कारण सभी विकल्पों का अनुवर्तन करती सी दिखती है।

# लघु वाक्यवृत्ति

पूर्व श्लोक में आचार्य ने बताया कि रूपादि में गुण-दोषादि विकल्पों की कल्पना बुद्धि द्वारा ही होती है। रूपादि विषयो के साथ बुद्धि के इन समस्त व्यवहार को शुद्ध चेतनता ही प्रकाशित करती रहती है।

*'विषयों में गुण-दोषादि बुद्धि के द्वारा की गई कल्पनामात्र है।'*

सत्य के ज्ञान के अभाव में ही अविचार से विविध कल्पनाएं होती है। यही संसरण का हेतु बनती है। उससे मुक्ति हेतु अपने अज्ञान की विनम्र स्वीकृति होनी चाहिए। अज्ञान की विनम्रता ही प्रामाणिक ज्ञान व विचार के लिए प्रेरित करती है। उसके लिए बगैर किसी प्रतिक्रिया के, समत्व और तटस्थता से युक्त होकर देखना

# लघु वाक्यवृत्ति

चाहिए। तब गहराई से विचार हो पाता है। यदि विविध विषयों के बारे में अपने द्वारा किए गए सुख के सामर्थ्य का निश्चय सत्य होता तो वह सदैव सुख देना चाहिए, साथ ही प्रत्येक व्यक्ति को भी उससे सुख की अनुभूति होनी चाहिए। किन्तु यह भी अनुभव होता है कि तत्तद् विषय कभी सुख देता है, तो कभी दु:ख भी देता है, तथा सब के लिए समान रूप से सुखादि का हेतु नहीं होता है। यह दिखाता है कि वह स्वयं सुखादि देने के सामर्थ्य से युक्त नहीं है। हम जिसे महत्व प्रदान करते है, वही सुखादि का हेतु बन जाता है, एवं हमारे द्वारा दिए गए महत्व के अनुपात में ही उससे सुखादि होते है। जो भी इस तथ्य को देख लेता है, वह उनके प्रति पराधीनता, आसक्ति आदि से मुक्त होता है, परिणामस्वरूप उसे तटस्थता से देखकर गहराई से विचार करने हेतु उपलब्ध हो पाता है।

# लघु वाक्यवृत्ति

पहले विषय के प्रति गुण-दोष का निश्चय एक धारणामात्र है, यह निश्चय करें। उसके उपरान्त नित्य-अनित्य का विवेक करते हुए उसकी गहराई में जाएं। प्रत्येक विषय को इन्द्रिय द्वारा ग्रहण करने पर तत्तद् विषयक वृत्ति अन्तःकरण में जगती है, और उसके होने का ज्ञान होता है। यह विषय देश, कालादि से संकुचित होने की वजह से स्थायी नहीं रहता है। किन्तु जब कोई दूसरा विषय समक्ष आता है, तो पहले विषय की वृत्ति नहीं रहती है। इस प्रकार सभी विषयक वृत्तियां आती जाती रहती है। यह उसकी अनित्यता का सूचक है।

जिस समय उसके प्रति सभान होते है, उसी समय हमें दिखती है। इस प्रकार सतत मन में वस्तु विषयक वृत्तियों का आवागमन होता रहता है। उसे प्रकाशित करनेवाली चेतना अपरिवर्तशीनील बनी रहती है। वृत्ति के आने-जाने से उसका आवागमन नहीं होता है तथा यह इन वृत्तियों के होने व उसके अभाव दोनों को प्रकाशित करती है। यह चेतना ही सब के अधिष्ठान की तरह स्थित है।

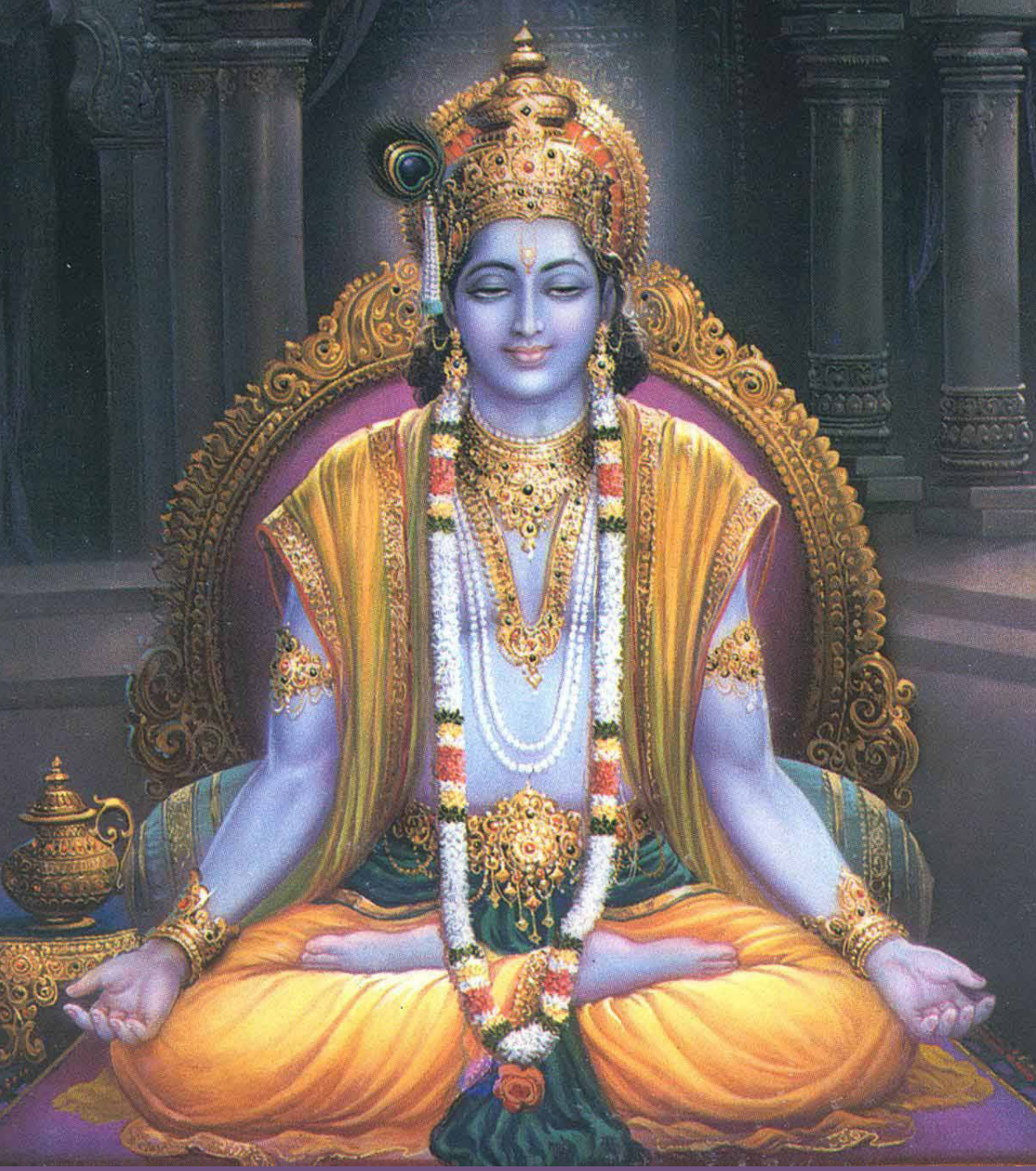

कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम्

# गीता मननम्

धर्मसम्मूढचेताः।

गीता अध्याय २/७

# धर्मसम्मूढ़ चेताः

मनुष्य के चारों पुरुषार्थ के अन्तर्गत धर्म को सर्वप्रथम स्थान पर रखा गया, क्योंकि धर्म से ही मनुष्य का सर्वांगिण विकास तथा हर प्रकार का कल्याण होता है। अधिकतर मनुष्य में धर्म विषयक मोह विद्यमान होता है। कई लोग धर्म का अभिप्राय कुछ पूजा-पाठ एवं कर्मकाण्ड आदि का आश्रय लेना मात्र समझते हैं। अधिकतर लोगों में यह धारणा होती है कि हमें सुख-दुःख आदि बाहर ही किसी वस्तु, व्यक्ति या परिस्थिति से प्राप्त होते है। इसलिए धर्म के आश्रय से उसमें परिवर्तन की चाह की अपेक्षा करते है। यदि यह सम्भव नहीं होता है तो उससे पलायन की इच्छा करते है। धर्म का पालन कोई कर्मकाण्ड मात्र या पूजापाठ़ादि का आश्रय लेना मात्र नहीं है। धर्म से बाहरी परिस्थिति में भी किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं होता है। धर्मविषयक ज्ञान जीवन में अत्यन्त

आवश्यक है। उसी ज्ञान से कर्तव्य-अकर्तव्य का बोध होकर सही समय पर सही निर्णय लेने में सक्षम होते है। हर परिस्थिति में समत्व से युक्त होकर देखने का सामर्थ्य जगता जाता है। शनैः शनैः मन सूक्ष्म, शान्त और विचारशील होंता जाता है। इस निर्णय के सामर्थ्य के अभाव में जीवन में विविध तनाव, सन्तापादि की समस्या होती है, जिसका परिणाम शोक की गर्त में जाना है। आज के समय में हो रहे अनेकों डिप्रेद्दान, मानसिक रोगादि की समस्या का यही कारण है।

यह न केवल वर्तमान समय की बात है, किन्तु अर्जुन भी महाभारत के युद्ध में इसी समस्या से ग्रस्त हो गया। इसी समस्या के उपचार रूप भगवान के द्वारा उपदिष्ट भगवद्गीता है। महाभारत का युद्ध आरम्भ होने से पूर्व ही अर्जुन अपने ही मन, अपनी भावना आदि से परास्त हो गया। अत्यन्त शोकाकुल होकर भगवान से युद्ध नहीं करने के औचित्य के पक्ष में अनेकों तर्क देने लगा। उन तर्को के अन्तर्गत स्पष्टरूप से यह ज्ञात होता है कि अर्जुन में धर्म के विषय में

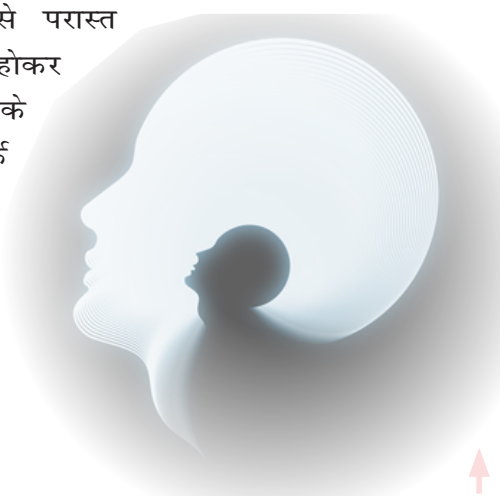

# धर्मसम्मूढ़ चेताः

कुछ समझ विद्यमान है। इतना ही नहीं, नारायणी सेना को त्यागकर भगवान् श्रीकृष्ण का सारथि के रूप में चयन करना उनकी धर्मनिष्ठा का सूचक है। फिर भी आज एक ऐसी परिस्थिति के समक्ष आकर खड़ा हो गया कि जहां अपने अन्दर के धर्मविषयक ज्ञान भी मानों अनुपलब्ध सा प्रतीत हो रहा है। एक ओर धर्म के अनुरूप तर्क भी दे रहा है। उनके प्रत्येक तर्क में सतही दृष्टि से तो औचित्य भी प्रतीत होता है। तथापि भगवान उनके इन तर्कों का अनुमोदन नहीं करते हैं।

*'अज्ञान की विनम्र स्वीकृति के साथ समर्पण ही ज्ञान के द्वार को उद्घाटित करता है।'*

धर्मसम्मत निर्णय होता तो अर्जुन के मन की शोकाकुल अवस्था के स्थान पर प्रसन्नता और संतुष्टि का अनुभव होता। अर्जुन जैसा धर्मनिष्ठ व्यक्ति भी आज उस कगार पर आकर खड़ा है, जहां अन्दर से टूट सा गया है। इससे यही निश्चय होता है कि धर्मविषयक ज्ञान भी अत्यन्त सूक्ष्म है। अर्जुन की बुद्धिमत्ता उसीमें थी कि उन्होंने अन्य विकल्प होते हुए भी स्वयं भगवान श्रीकृष्ण का सारथि के रूप में चयन किया। अतः उनके रथ

# धर्मसम्मूढ़ चेताः

के भटकने की कोई सम्भावना ही नहीं थी। अर्जुन ने देखा कि उनकी शास्त्र के द्वारा प्रामाणित, धर्ममय मीमांसा के उपरान्त भी श्रीकृष्ण उनके युद्ध न करने के निर्णय से असहमत थे। तब उन्हें अपने अज्ञान का भान हुआ और भगवान के श्रीचरणों में शिष्यभाव से समर्पित हो गया। अर्जुन ने यह स्वीकार किया कि, भगवन्! हम उचित-अनुचित का निर्णय यह नहीं कर पा रहे है। धर्मविषयक हमारा सभी ज्ञान अप्रामाणिक दिखाई दे रहा है। हम 'धर्मसम्मूढ चेताः' है अर्थात् धर्म के विषय में मोहित है। हमारे लिए क्या धर्म है, उस विषयक हमें ज्ञान देकर शिक्षित कीजीएं।

यद्यपि भगवान् ने उसकी इस स्वीकृति के पूर्व ही बता दिया था कि इस धर्मयुद्ध को लड़ना ही तुम्हारे लिए धर्म है। युद्ध से पलायन करना यह क्षत्रिय धर्म के विपरीत, अशोभनीय और समस्त पुरुषार्थ से वंचित करने वाला है। यह स्पष्टरूप से बताने के उपरान्त भी अर्जुन धर्मविषयक ज्ञान के लिए प्रार्थना करता है, तो यह स्वाभाविक प्रश्न होता है कि अर्जुन ऐसे कौन से धर्म के ज्ञान की अपेक्षा करता है? अर्जुन की अपने अज्ञान की स्वीकृति होकर शिष्यभाव से भगवान के श्रीचरणों

# धर्मसम्मूढ़ चेताः

में समर्पण जीवन का अत्यन्त कल्याणकारी मोड़ था। यह एक मंगलाकरी घटना है। अज्ञान की विनम्रता के साथ ज्ञानवान के चरणों में समर्पण ही ज्ञान के द्वार उद्घाटित करता है।

*'धर्म एक साधनरूप है, जिसका साध्य अध्यात्म लक्ष्य की सिद्धि हेतु पात्रता जगाना है।'*

धर्म का अभिप्राय किसी विधि और निषेध विषयक ज्ञानमात्र नहीं है। धर्म का ज्ञान भी सूक्ष्म है। प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में जीवन में विविध परिस्थितियों में एक द्वन्द्वात्मक स्थिति उत्पन्न होती है, जिसमें क्या सही और क्या गलत है; उसका निर्णय करना कठिन हो जाता है। विचार करने पर दोनों ही पक्ष महत्वपूर्ण दीखते है। ऐसी अनिर्णय की स्थिति में अनेकों शोक, तनावादि की समस्याएं होती है। यहां तक कि अपने अस्तित्व को बनाए रखना भी बोजारूप लगने लगता है। अर्जुन भी ऐसी अनिर्णय की स्थिति को प्राप्त करके अत्यन्त शोक की गर्त में डूब गया। अतः यह विचारणीय है कि धर्म का निर्णय किस आधार पर किया जाना चाहिए। क्या धर्म का पालन करते करते जीवन पूरा व्यतीत कर देना यही मात्र प्रयोजन

# धर्मसम्मूढ़ चेताः

है? धर्मपालन से इस जीवन के उपरान्त स्वर्गादि के सुख को प्राप्त करना यह लक्ष्य है या कुछ ओर? अर्जुन के मन में भी यही प्रश्न है कि धर्म का पालन हमें क्यों करना चाहिए? क्या स्वर्गादि के सुख के लिए करना चाहिए? यदि हां! तो अर्जुन ने उसे पहले ही उस स्पष्ट कर दिया कि हमें न इह लोक के भोग की कामना है और न ही स्वर्गादि की। वह समझना चाहता है कि वास्तविक धर्म क्या है, धर्म के पालन से कौनसा लक्ष्य सिद्ध करना है और धर्म के निर्णय का आधार क्या होता है? इन सभी प्रश्नों का समाधान अर्जुन चाहता है। अर्जुन की समस्या से गीता का विषय भी स्पष्ट हो जाता है कि गीता धर्म के निर्णय सम्बन्धी ज्ञान प्रदान करती है। हमारा किस समय क्या धर्म होता है और हम कैसे अपने धर्म का निर्धारण कर सकते हैं। इसलिए गीता के विषय को यदि यह कहे कि गीता हमें शीघ्र और सही निर्णय की कला सीखाती है तो यह उचित ही है।

अर्जुन के इस समस्या के समाधान रूप समस्त गीता का उपदेश है। इसका परिणाम

# धर्मसम्मूढ़ चेताः

अपने समस्त मोह की समाप्ति होकर एक समग्र जीवन जीने का अध्याय आरम्भ होता है। जहां अपनी स्वकेन्द्रिता से मुक्त होकर पूर्ण समग्रता से कर्म को यज्ञ बनाकर जीते है। धर्म का आधार तथा उसका लक्ष्य अध्यात्म ही होता है। धर्म भी इस अध्यात्मलक्ष्य की सिद्धि हेतु पात्र बनाता है। इसीलिए भगवान अर्जुन को उपदेश देते हुए सर्व प्रथम अपने जीवन के इस अध्यात्मलक्ष्य का परिचय देते है। इस लक्ष्य के लिए ही हम जहां खड़े है, वहां से यात्रा की जानी चाहिए। तब ही धर्मसंकट से मुक्त होकर अपने अध्यात्म विकास की ओर अग्रसर होते है। अन्ततः समस्त धर्म-अधर्म से परे अपने स्वस्वरूप में स्थित होकर मुक्त होकर जीते है। अर्जुन के इस प्रश्न के उत्तर के रूप में भगवान धर्म से अध्यात्म तक की यात्रा का स्वरूप बताते हैं।

(श्री रामचरित मानस पर आधारित)

# श्री लक्ष्मण चरित्र

— २१ —

बन्दउं लछिमन पद जल जाता। सीतल सुभग भगत सुखदाता॥
रघुपति कीरति बिमल पताका। दण्ड समान भयउ जस जाका॥

# श्री लक्ष्मण चरित्र

वनयात्रा के तेरह वर्ष लक्ष्मण के लिए अत्यन्त सुखद थे। मैथिली और राघवेन्द्र की प्रसन्नता ही उनका सब से बड़ा सुख था और उनका यह सुख प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा था। विदेहजा के आनन्द और उत्साह की कोई सीमा न थी। उन्हें अयोध्या से न जाने कितना गुणित आनन्द वन में आ रहा था। 'सिय मन राम चरन अनुरागा। अवध सहस सम बन प्रिय लागा।' में गोस्वामीनी उनकी मन:स्थिति का चित्र प्रस्तुत करते हैं। प्रभु भी परं प्रसन्न थे। उन्हें कभी-कभी अयोध्या और भरत की स्मृति अवश्य विह्वल बना देती थी। इन क्षणों में प्रभु की मन:स्थिति लक्ष्मण को भी व्यथित कर देती थी। पर जहां तक उनका सम्बन्ध था, वे इन स्थितियों से उपर उठ चुके

# श्री लक्ष्मण चरित्र

थे। अयोध्या, पिता, माता एवं पत्नी की स्मृति ने उन्हें कभी विचलित नहीं किया। इस अनन्य सेवाव्रती के पास समय ही नहीं था इनके चिन्तन का। अपने आराध्य की सेवा करते हुए कभी उनमें विरसता या बासीपन की भावना का उदय नहीं हुआ।

तेरह वर्षों के विपरीत चौदहवां वर्ष अत्यन्त दुःखदायी सिद्ध हुआ। यह मैथिली के अपहरण का काल था। लक्ष्मणजी के लिए यह काल सब से अधिक पीड़ा का कारण बना। माया-मृग का आकर्षकरूप मैथिली को अपनी ओर आकृष्ट कर लेता है और वे प्रभु से इस मृग के चर्म को लाने का अनुरोध करती हैं। मृग के पीछे दौड़ने से पहले राघव लक्ष्मण को सावधान रहने का आदेश देते हैं। उनका कथन था, 'यह वन राक्षसों की उपस्थिति के कारण असुरक्षित है। अतः तुम सजग रहकर विवेक और बल का प्रयोग कर मैथिली की रक्षा करना।' पर परिस्थितियों ने उन्हें वैदेही को अकेले छोड़कर

# श्री लक्ष्मण चरित्र

जाने के लिए बाध्य का दिया और इसका कारण मैथिली बनी। प्रभु के शर-सन्धान से घायल मारीच मृत्यु के क्षणों में लक्ष्मण का नाम उच्च स्वरों में पुकार उठता है। विदेहजा को उसके स्वर में प्रभु के स्वर की भ्रान्ति हो गई। और वे तत्काल उस स्वर की ओर लक्ष्मण का ध्यान आकृष्ट करती हुई उन्हें राघव की सहायता के लिए जाने का आदेश देती हैं। लक्ष्मण इसे सुनते ही जोर से हंस पड़ें। इस हंसी ने मैथिली को अत्यन्त मर्माहत कर दिया। साधारणतया यह हंसी अवसर के अनुकूल नहीं जान पड़ती। पर लक्ष्मण के लिए सारा घटनाक्रम इतना अप्रत्याशित था कि वे अपनी हंसी को रोक ही नहीं पाएं। प्रभु पर संकट की कल्पना ही उन्हें आश्चर्यजनक प्रतीत होती है। इस कल्पित संकट से उन्हें त्राण दिलाने के लिए स्वयं उनके जाने की बात उन्हें इतनी अटपटी लगी कि वे ठठाकर हंस पड़े। संकट में पड़े हुए ईश्वर की रक्षा के लिए महाशक्ति की ओर से जीव की

# श्री लक्ष्मण चरित्र

पुकार में असंगति ही असंगति तो दिखाई देती है। वे इस असम्भव कल्पना की ओर मां का ध्यान भी आकृष्ट करते हैं। मां से प्रश्न करते हैं कि, 'जिसकी भृकुटी विलास से सृष्टि का विनाश हो जाता है, क्या उन प्रभु पर कभी संकट आ सकता है?' पर मैथिली का ध्यान इन वाक्रूों की ओर जाता ही नहीं है।वे तो इतना ही देखती है कि, श्रीराम के संकट की बात सुनकर लक्ष्मण हंस रहा है।' यह हंसी उन्हें विक्षिप्त बना देती है। इस हंसी ने उन्हें सबकुछ भूला दिया जो इन वर्षों में घटित हुआ था।

# पूज्य गुरुजी का Online

# ज्ञानयज्ञ

आदिशंकराचार्यजी विरचित

## विषय : साधना पंचकम्

( सम्पूर्ण अध्यात्मयात्रा )

**२० अगस्त से ३० सितम्बर २०२२**

**जन्माष्टमी से पितृपक्ष**

**की समाप्ति तक**

कार्यक्रम के प्रायोजन में सहयोग
करके पुण्यलाभ अर्जित करें।

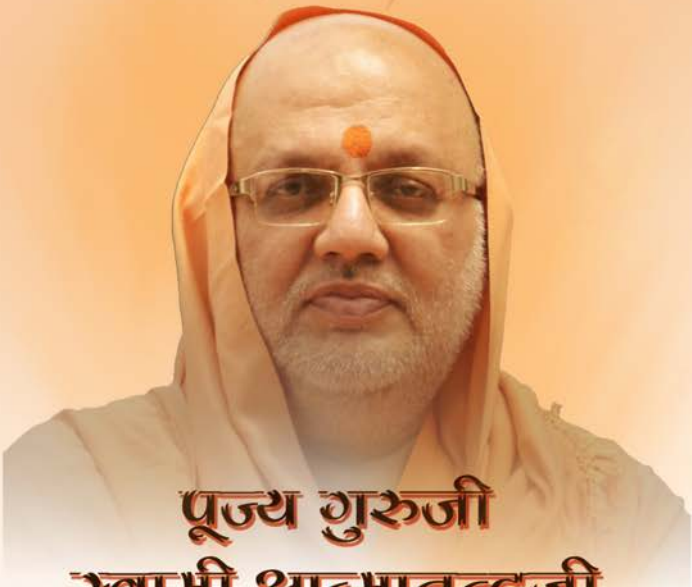

## पूज्य गुरुजी
## स्वामी आत्मानन्दजी

www.vmission.org.in / vashram.in@gmail.com;
Mb / WhatsApp - 7000361938

# जीवनमुक्त

— २५ —

# उत्तरकाशी

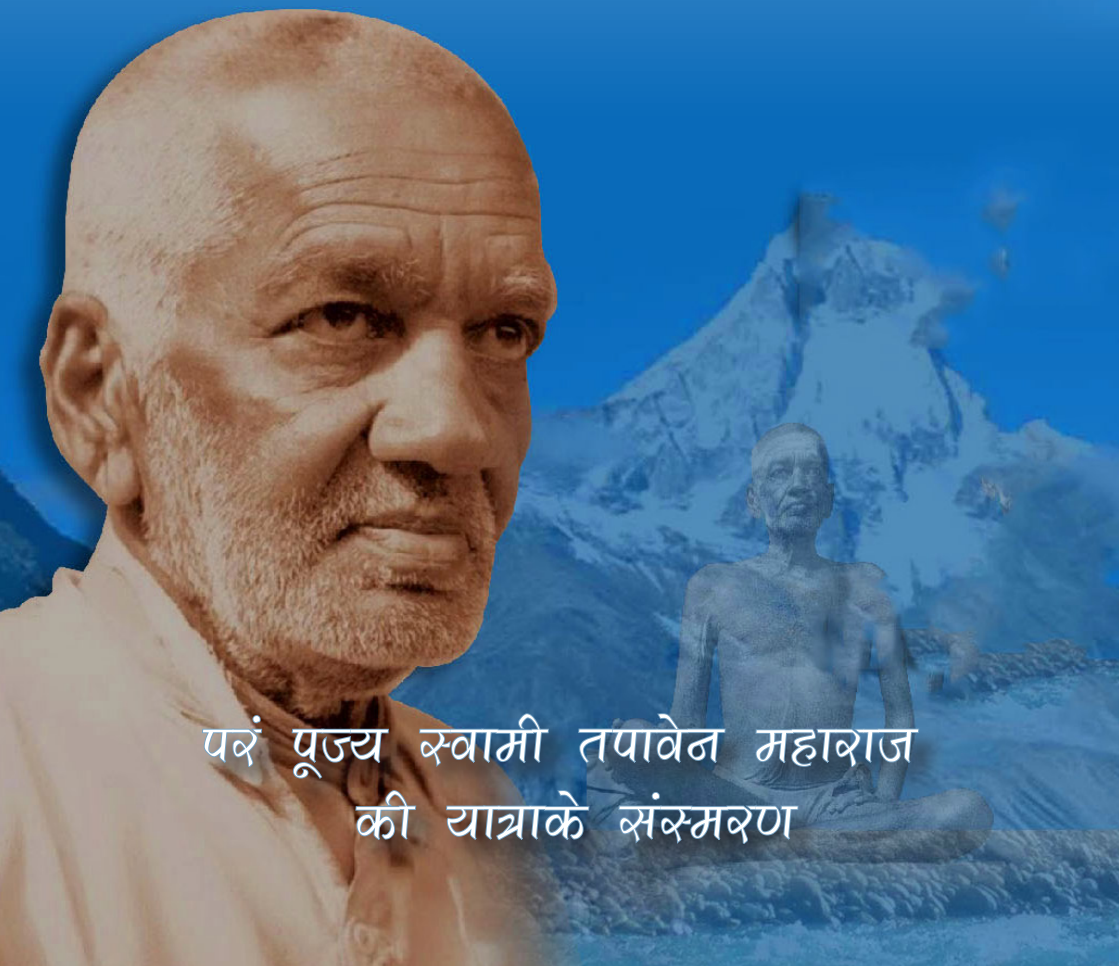

परं पूज्य स्वामी तपोवेन महाराज
की यात्राके संस्मरण

# जीवन्मुक्त

हृषीकेश से मैं ज्यादातर उत्तकाशी के लिए प्रस्थान किया करता था। हृषीकेश से सौम्यकाशी की ओर के उस अति धन्य और अधिक रमणीय हिमालय मार्ग को देखकर यदि पाठक खुश होना चाहते हैं तो लीजिएं, उधर की ओर प्रस्थान करके मेरे पीछे़ पीछे़ चलते आइयें। बम्बई, पैरिस, लंदन आदि नगरों की प्रासाद पंक्तियों से परिवेष्टित, बहुत से आडम्बरों से संकुल, कलरवों से मुखरित और वैद्युत दीप मालाओं से दैदीप्यमान राजमार्गो में भी जो सुख नहीं मिलता, वह सुख इन हिमगिरि सरणियों में मिलता है। इन पर चलने के लिए सभी पाठक उन्मेष के साथ मेरे पीछे़ आएंगे, ऐसा मेरा विश्वास है। हृषीकेश सौम्यकाशी की और मुख्यतः तीन मार्ग है।

# जीवन्मुक्त

उनमें सब से सरल तथा मेरे लिए सब से अधिक परिचित मार्ग से हम यात्रा करेंगे। हृषीकेश भूमि से पश्चिमोत्तरी दिशा में जानेवाले रास्ते से कुछ उपर की और चढते जाएँ तो झिल्ली झंकारनाद से निनादित गम्भीर वन का आरम्भ होता है। वनान्तर में प्रविष्ट होकर एक दो मील समतल भूमि पर चलने के बाद फिर उँचे पहाड आ जाते है। और इसलिए चढाई भी शुरू हो जाती है। पर पहाडों के पार्श्वभाग भी वनों से आच्छादित बने रहते है। विभिन्न भाँति की विटपियों, वल्लियों और गुल्मों से भरी पूरी निबिड़ वनराजि का सौंदर्य व गांभीर्य न्यून- अधिक भाव के बिना पर्वत के शिखर तक एक रूप से विराजमान है।

अहो, कितना रमणीय वन है! कृत्रिम सुन्दरता तो क्षणिक होती है, पर अकृत्रिम सुन्दरता अलग होती है। मानवकर या मानवबुद्धि से बिलकुल असम्बद्ध, ईश्वर के ही हाथों निर्मित सौंदर्य संपत्ति ऐसे वनान्तरों को छोड़ और कहीं संपूर्णरूप से प्रकट नही होती। सौंदर्यानुभूति का आनंद ही नही, बल्कि बहुमुखी ईश्वरीय लीलाओं के प्रत्यक्ष वीक्षण का एक असाधारण सुख भी

# जीवन्मुक्त

यहां भरा रहता है। सब प्रकार के लोकव्यवहार यहां चित्रित से दिखायी देते है। समाचारपत्रों को पढ़े बिना ही यहा खडे होकर चारों और देखेनेवाले एक बुद्धिमान् की बुद्धि से संसार के सभी समाचार समा जाते है। लीजिएं! मर्कट्यूथ का नेता अनेक मर्कट युवतियों के साथ विहार कर रहा है कि इतने में एक दूसरा बडा सा बंदर इन मर्कटियों के पास पहुंच जाता है, और इनका प्रियतम उसके साथ महासंग्राम करके वनान्तर को थर थर कंपा देता है। देखिएं! दूसरी और एक और समूह किसी खाद्य वस्तु के लिए जर्मन युद्ध को भी पीछे करते हुए भयानक लडाई में लगा है। आपस में दाँत दिखाते, साहस के साथ लडते, कुछ डरकर भागते और कुछ उनके पीछे दौडते कोलाहल मचा रहे है। अहो! कामिनी और काँचन सब कहीं कलह के ही कारण है। ये रक्तमुख मर्कट बडे धूर्त होते है। लीजिएं! इन कृष्णमुखों के समूह का निरीक्षण कीजिएं! वे बडे भक्त तथा शांत हेाते है। दूर उंचे वृक्षों की शाखाओं पर झगडा या अधिक चपलता किये बिना वे ईश्वर चिंतकों के समान चुपचाप बैठे है।

# पौराणिक गाथा

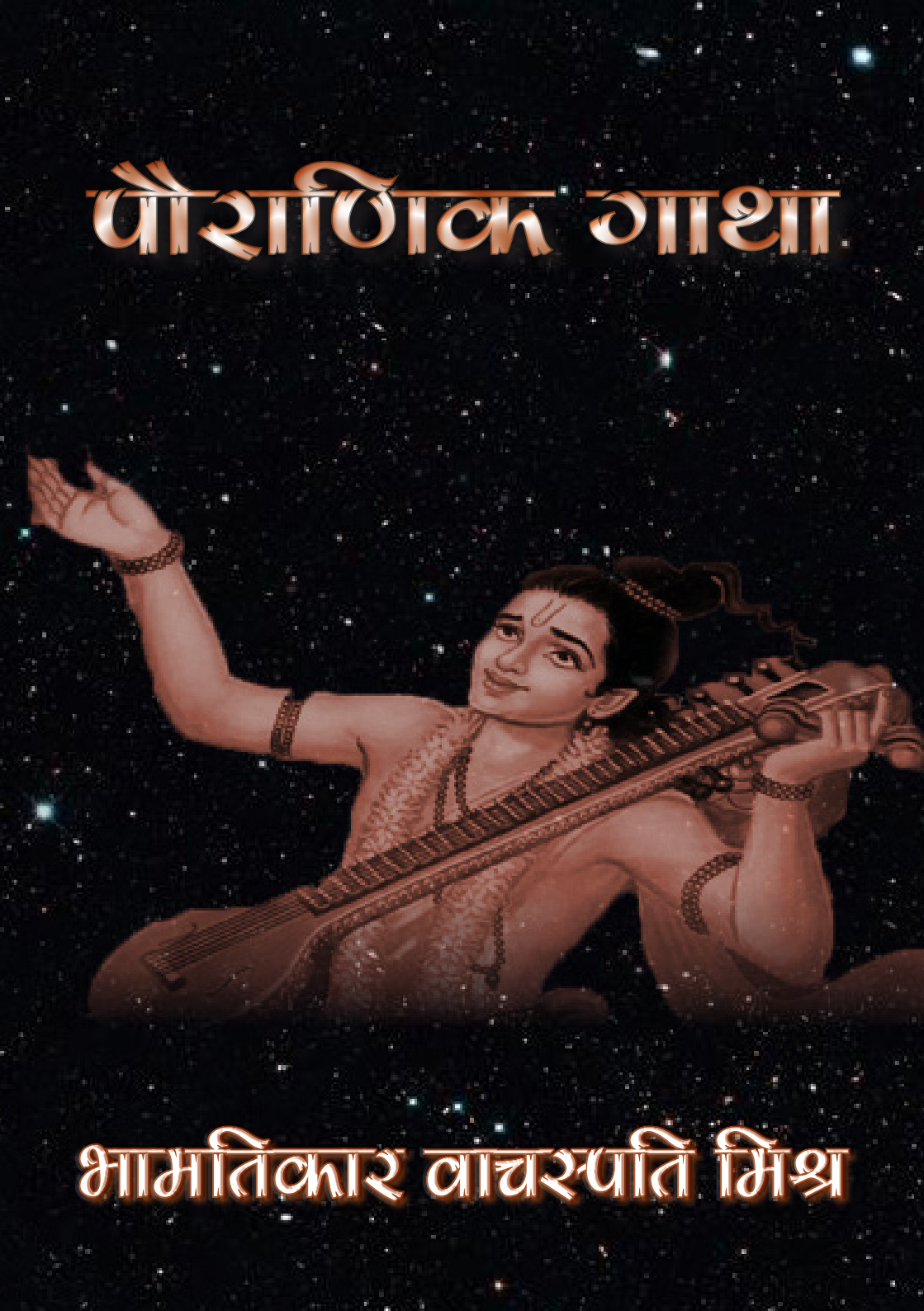

## भामतिकार वाचस्पति मिश्र

# भामतिकार वाचस्पति मिश्र

वाचस्पति मिश्र बहुत विद्वान्, षड्दर्शन के ज्ञाता, वेदान्तज्ञान में परं निष्ठ, श्रोत्रिय-ब्रह्मनिष्ठ आचार्य थे। एक समय वे वेदव्यासजी द्वारा रचित ब्रह्मसूत्र पर टीका लिख रहे थे। उसी दौरान उनका विवाह एक भामति नामक अत्यन्त सुशील और संस्कारी कन्या से विवाह हुआ। विवाह होते ही वाचस्पति पुनः अपने लेखनकार्य में झूट गएं। दिन रात वे ब्रह्मसूत्र पर चिन्तन करके उस पर भाष्य लिखने में रत थे।

भामती प्रतिदिन उनसे पूर्व उठ़कर अपने पतिदेव के कार्य की सब तैयारी कर देती थी। उनके स्नानादि, सन्ध्या-वन्दना आदि की व्यवस्था करती थी। उन्हें समय से भोजन आदि देती थी। शाम को अन्धेरा होने के पूर्व ही दीपक जलाकर उनके

समक्ष रख देती थी, जिससे कि उनके इस कार्य में किसी प्रकार का व्यवधान न हो। वाचस्पतिजी को इस कार्य को पूरा करने में कई वर्ष लग गएं। वे पूर्णतः समर्पित होकर अपने इस कार्य करते रहें। इस प्रक्रिया में अपने विवाह और पत्नी आदि के सम्बन्ध में उन्हें कुछ भी स्मरण नहीं रहा। इस प्रकार वर्षो बीत गएं।

अब यह लेखन कार्य जब समाप्ति की ओर था। ऐसे में एक शाम को भामति दीपक प्रज्जवलित करके उनके समक्ष रखने आई। तब अचानक उनका ध्यान भामति की ओर गया और उनसे पूछ लिया कि, 'हे देवी! आप कौन है?' भामति ने मुस्कुराते हुए कहा कि, 'स्वामी! मैं आप ही की पत्नी भामति हूं।' भामति ने उन्हें अपने विवाह की घटना आदि स्मरण कराया। यह स्मरण होते ही वे अत्यन्त दुःखी हुएं। और कहा कि इतने वर्षे तक तुम हमारी बगैर अपेक्षा के सेवा करती रही। समस समय पर हमारी प्रत्येक आवश्यकता की पूर्ति करती रही और हमने उसकी ओर ध्यान तक नहीं दिया। हमने तुम्हारे साथ घोर

# भामतिकार वाचस्पति मिश्र

अन्याय किया है। उसके लिए हमें क्षमा कर दों।' भामति ने कहा कि, 'नहीं स्वामी! आप के द्वारा किया जानेवाला कार्य लोकहित के लिए अत्यन्त आवश्यक था। ऐसे कार्य में आपका सहयोग करना हमारे लिए खुशी का विषय है। आपने किसी प्रकार का अन्याय नहीं किया है। किन्तु इस कार्य में सहभागी बनने का सौभाग्य प्रदान किया है। इसके लिए हम आपके प्रति कृतज्ञ है।'

यह सुनकर वाचस्पतिजी ने अत्यन्त प्रसन्नता होकर कहा कि, 'तुम्हारे समान पत्नी पाकर मैं धन्य हो गया। तुम्हारी सेवा और समर्पण की वजह से ही इस ग्रंथ का लेखनकार्य सम्भव हुआ है। अतः यह भाष्य भामतिटीका के नाम से ही प्रसिद्ध होगी। तथा उसके रचयिता वाचस्पति मिश्र भी भामतीकार नाम से ही जाने जाते है। यह प्रसिद्ध भामतिटीका विद्वानों में अत्यन्त आदरणीय है। ऐसा अन्योन्य समर्पण, प्रेम और सेवा से युक्त गृहस्थजीवन धन्य होता है।

# Mission & Ashram News

Bringing Love & Light
in the lives of all with the
Knowledge of Self

# आश्रम समाचार

## वेदान्त शिविर

# आश्रम समाचार

## वेदान्त शिविर

# आश्रम समाचार

## वेदान्त शिविर

# आश्रम समाचार

## वेदान्त शिविर

# आश्रम समाचार

## वेदान्त शिविर

# आश्रम समाचार

## वेदान्त शिविर

# आश्रम समाचार

## वेदान्त शिविर

# आश्रम समाचार

## वेदान्त शिविर

# आश्रम समाचार

## गुरु पूर्णिमा

# आश्रम समाचार

## गुरु पूर्णिमा

# आश्रम समाचार

## गुरु पूर्णिमा

# आश्रम समाचार

## गुरु पूर्णिमा

# आश्रम समाचार

## गुरु पूर्णिमा

# आश्रम समाचार

## गुरु पूर्णिमा

# आश्रम समाचार

## गुरु पूर्णिमा

# आश्रम समाचार

## गुरु पूर्णिमा

# आश्रम समाचार

## गुरु पूर्णिमा

# आश्रम समाचार

## गुरु पूर्णिमा

# आश्रम समाचार

## गुरु पूर्णिमा

# आश्रम समाचार

## गुरु पूर्णिमा

# आश्रम समाचार

## गुरु पूर्णिमा

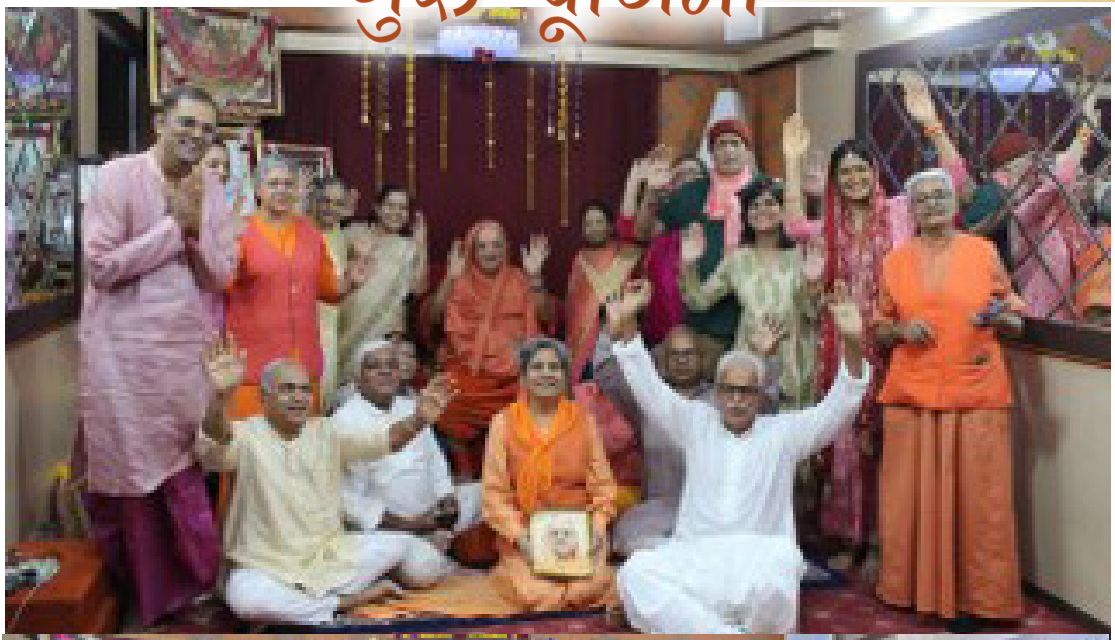

# आश्रम समाचार

## गुरु पूर्णिमा

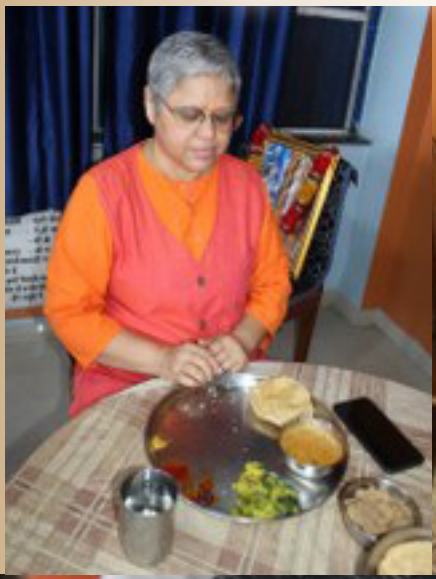

# आश्रम समाचार

## गुरु पूर्णिमा

# आश्रम समाचार

## गुरु पूर्णिमा

# आश्रम समाचार

## मन्दिर कार्यक्रम

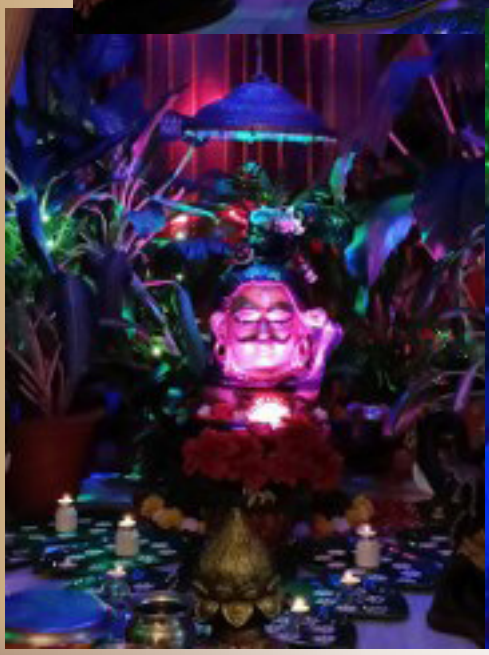

# आश्रम समाचार

## मन्दिर कार्यक्रम

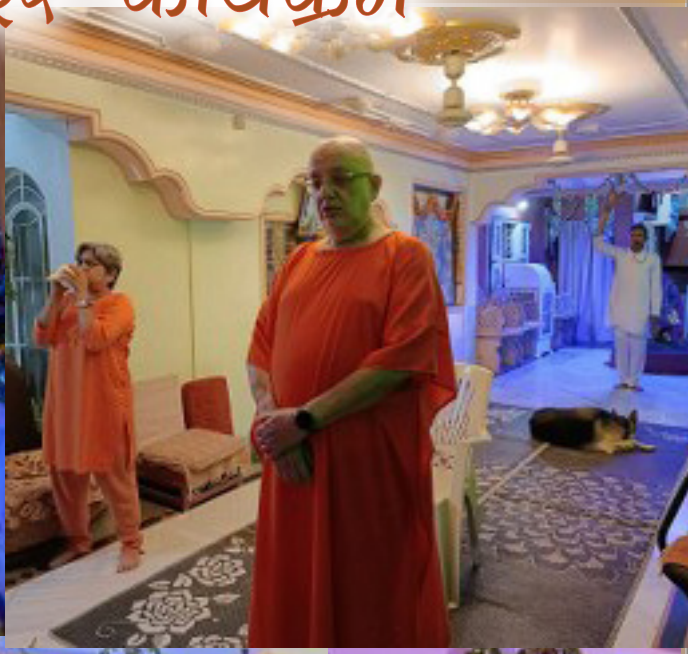

# आश्रम समाचार

## मन्दिर कार्यक्रम

# आश्रम समाचार

## मन्दिर कार्यक्रम

# आश्रम समाचार

## आगन्तुक

# आश्रम समाचार

## आगन्तुक

# आश्रम / मिशन कार्यक्रम

## 25 से 31 जुलाई 2022

## गीता ज्ञानयज्ञ

रामकृष्ण मिशन, खार, मुम्बई

पूज्य गुरुजी द्वारा

गीता अध्याय – १७

एवं पंचदशी अध्याय १०

---

## 20 अगस्त से 30 सितम्बर 2022

## ओनलाईन ज्ञानयज्ञ

पूज्य गुरुजी द्वारा

साधना पंचकम्

# Internet News

## Talks on (by P. Guruji) :

### Video Pravachans on YouTube Channel

~ Drig-Drushya Vivek

~ Upadesh Saar

~ Atma Bodha Pravachan

- Sundar Kand Pravachan

~ Prerak Kahaniya

- Ekshloki Pravachan

~ Sampoorna Gita Pravachan

- Kathopanishad Pravachan

- Shiva Mahimna Pravachan

- Hanuman Chalisa

# Internet News

## Audio Pravachans

~ Drig-Drushya Vivek

~ Upadesh Saar

~ Prerak Kahaniya

~ Sampoorna Gita Pravachan

~ Atmabodha Lessons

---

## Vedanta Ashram YouTube Channel

---

## Vedanta & Dharma Shastra Group

---

## Monthly eZines

~ Vedanta Sandesh - Aug '22

~ Vedanta Piyush - July '22

Visit us online :
Vedanta Mission

Check out earlier issues of :
Vedanta Piyush

Join us on Facebook :
Vedanta & Dharma Shastra Group

Published by:
Vedanta Ashram, Indore

Editor:
Swamini Amitananda Saraswati